दुर्गा सप्तसती का उद्भव एवं विकास

Chandi Prasad Saklani[1], Dr. Nidhi Rastogi[2]

Department of Sanskrit

[1,2]OPJS University, Churu (Rajasthan) – India

सार

शक्ति पूजा की परम्परा अत्यन्त पुरानी है। राजबली पाण्डेय द्वारा रचित हिन्दुधर्मकोष के आधार पर शक्ति की कल्पना तथा आराधना भारतीय धर्म की अत्यन्त पुरानी और स्थायी परम्परा है। अनेक रूपों में शक्ति की कल्पना हुई है। प्रधानतः मातृरूप में इसका विषेश पल्लवन हुआ है! मातृपूजा के कारणों पर दृश्टिपात करने पर एक तथ्य अनायास ही उभरने लगता है कि अतिप्राचीन काल मं परिवार में मातृसत्ता की व्यवस्था प्रचलित थी और कदाचित् इसी से इसका कोई सम्बन्ध रहा हो। पुरूश जाति का स्त्री जाति के प्रति नैसर्गिक आकर्शण भी इस भावना को उदित करने में सहायक हो सकता है। सृश्टि करने में स्त्री ही समर्थ है। अतः वेदान्त–सम्मत ब्रह्म भी सम्पूर्णभूतों का सृश्टा होने के कारण शक्ति स्त्री–रूप ही सिद्ध होता है। परमात्मा स्त्रीलिंग, पुलिंग तथा नपुंसकलिंगादि उपाधियों से रहित है। वह नाम–रूप से परे परम तत्व है। उपासक अपनी भावना के अनुसार उसके रूपादि की परिकल्पना करता है। यदि माँ के रूप में उसकी उपासना की जाए तो वह उपासक के अत्यन्त सन्निकट प्रतीत हो सकता है। पुरातत्व षास्त्रियों का भी यही मतहै कि मातृपूजा का प्रचलन अति प्राचीन काल से था। मातृपूजा सिन्धु–घाटी की सभ्यता के पहले से भी प्रचलित रही थी। मातृषक्ति के पूजक षाक्तों के इतिहास का अन्वेशण सिन्धु–घाटी से ही प्रारम्भ होता है। सिन्धु–घाटी की खुदाई में स्त्रियों के कुछ चित्र मिले है। डॉ. पुश्पेन्द्र षर्मा के अनुसार ये मूर्तियां प्राचीन सिन्धु सभ्यता काल में प्रत्येक घर में रखी जाती थीं। एवं इनका पूजन किया जाता था–

वेदों में शक्ति पूजा का उद्भव और विकास

प्राचीन और अर्वाचीन अनेक तथ्यों के आधार पर यह सिद्ध किया जा चुका है कि समस्त विष्व के उपलब्ध साहित्य में ऋग्वेद नामक ग्रन्थ सर्वप्राचीन है। इसके बाद क्रमषः यजुः, साम और अथर्ववेद का स्थान आता है। वेद भारतीय संस्कृत वाङ्मय की अमूल्य निधि है। शक्तितत्व के विशय मं लिखित प्रमाण सर्वप्रथम वेदों से ही प्राप्त किया जा सकता है। चारों वैदिक संहिताओं में माया, स्वधा, तम एवं शक्ति आदि अनेक षब्दों के द्वारा परब्रह्म की त्रिगुणत्मिका माया शक्ति का बोध कराया गया है।

वेदों में माया षब्द का उल्लेख प्रभा, ज्योति, मृशा, ज्ञान प्रज्ञा आदि अर्थों में किया गया है। षकत्यर्थक माया षब्द का भी यहाँ प्रयोग हुआ है। स्वधा और तम तथा निहार आदि षब्दों का प्रयोग माया के अर्थ में प्राप्त होता है। उत्कृश्ट बल तथा सामर्थ्य अर्थ में स्वयं शक्ति षब्द भी कई स्थलों पर प्रयुक्त हुआ है। सामवेद में लोकप्रसिद्ध शक्तिमान अर्थ में भी माया षब्द वर्णित है। अथर्ववेद में भी माया और शक्ति षब्दों का प्रयोग अनेक स्थलों पर देखा जा सकता है।

वेदों में शक्तिरूप में पृथ्वी की स्तुति

ऋग्वेद में पृथ्वी की स्तुति की गई है ओर उन्हे पिता 'द्यौः' के साथ देखा गया है। इस द्यावा पृथिवी की स्तुति अनेक स्थानों पर अनेक रूपों में मिलती है। वैदिक ऋशियों ने उनकी प्राणदायिनीं, अन्नदायिनी तथा मातृरूप में स्तुति करके अपनी श्रद्धा व्यक्त की है। ''माता पृथिवी महीयम्' कह कर उसके विस्तार का ज्ञान

कराया है। वैदिक सूक्तों में ऋशियों के कवि कल्पना के नहीं उनके वास्तविक धर्मबोध के भी दर्षन होते है। इसलिए उन्होंने श्रद्धावनत चित से उस श्रेश्ठ वस्तु को नमस्कार किया है। द्यौः पिता और माता पृथिवी के रूप में अस्पश्ट भाव से ''जगत पितरौ'' की कल्पना अस्वीकार नहीं कर सकते।

ऋग्वेद में पृथिवी का जो मातृरूप हमें दृश्टिगोचर होता है, उसकी विकसित महिमामयी मूर्ति

अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में है। उसमें पृथिवी का मंगलमय, सन्तानवत्सलारूप वर्णित है। पृथिवी का मातृरूप बड़ा ही व्यापक और प्रभावषाली है। यह विष्वोत्पादिका पृथिवी के प्रति मनुश्य का प्रथम उच्छवास है।

अदिति – ऋग्वेद में अदिति का उल्लेख पृथिवी के रूप में भी किया गया है। अथर्ववेद तथा तैत्तिरीय संहिता प्रभृति ग्रन्थों में पृथिवी और अदिति एक ही है। परवर्ती काल में अदिति का दक्षजननी एवं दक्षकन्या दोनों रूपों में उल्लेख पाया जाता है। उशा को युद्ध की देवी के रूप मे वर्णित किया गया है। इन्हें सर्वश्रेश्ठ एवं सर्वषक्तिमती उच्चरित किया गया है। उशा देवी अन्धकार से प्रकाष के रूप में परिवर्तित होती है। इस प्रकार इसका सम्बन्ध पौराणिक कौषिकी देवी से भी किया जा सकता है। जो कालिका देवी की कोषिकाओं से प्रकट हुई थी। अतः ये हो दुर्गा एवं पार्वती है। डॉ. पुश्पेन्द्र कुमार ने अपनी पुस्तक मे इसी भाव को युक्तिपूर्ण ढ़ंग से वर्णित किया है।

सरस्वती – वेदों मे सरस्वती को पावन नदी एवं देवी के रूप चित्रित किया है। ये ही इला, मही और भारती है। यह श्रेश्ठ नदी, देवी एवं माता है। ये अति सौन्दर्यवती होते हुए भी षत्रुमारण के समय करालवदंना हो जाती है। ये ही परवर्तीकाल में वाक् सावित्री एवं गायत्री आदि रूपों में पूजित हुई है।

देवी शक्ति– ऋग्वेद के देवीसूक्त में मातृषक्ति का अद्वितीय प्रभाव वर्णित हुआ है। वह स्वयं शक्तिस्वरूप होकर अपने माहत्म्य का उद्घाटन करतो है। मैं सच्चिदानन्दमयी सर्वात्मा देवी रूद्र, बसु, आदित्य तथा विष्वदेवगणों के रूप में विचरती हूँ मै ंही इन्द्र, वरूण, अग्नि तथा अष्विनी कुमारों को धारण करती हूं। सोम, त्वश्टा, पूशा, भंग और प्रजापति भी मैं ही हूं। यज्ञ, यजमान और यज्ञफल सब मेरे ही रूप है। जीवां की भोक्तृषक्ति, ष्वसनषक्ति, दर्षन एवं श्रवण की षाक्ति मैं ही हूं। मैं जिस पर प्रसन्न होती हूं। उसे ही ब्रह्म ऋशि सुमेधा बना देती हूं। मैं ही सब कुछ हूं तथा सबसे परे हूं।

ईष्वर के मातृ रूप को ऋग्वेद में अदिति कहा गया है। ''द्यौ'' भी इसी का ही रूप है। अदिति ही माता–पिता और पुत्र है। अतः वहीं एक अनन्त, अनादि, सनातन शक्ति की माता, पिता एवं सब कुछ है।

शक्ति का प्राचीन रूप षची – देवताओं की शक्ति की कल्पना प्राचीन काल में ही रही होगी, किन्तु वर्तमान काल का स्वरूप नहीं रहा होगा। प्राचीन काल में उन्हें शक्ति के स्थान पर षची कहा जाता था। ऋग्वेद में प्रायः ग्यारह बार षाक्ति षब्द का प्रयोग हुआ है। और उसका इन्द्र से सम्बन्ध प्रत्येक बार दिखलाया गया है। सम्भव है इन्द्र की शक्ति षची को नारी रूप देकर उन्हें इन्द्राणी रूप में पत्नी पद भी दे दिया गया हो। ऋग्वेद से षची को प्रज्ञा भी कहा गया है वाक् का पर्याय यही प्रज्ञा है। इसी प्रज्ञा से समस्त मन्त्र बने है ओर उसी से छन्द भी प्रकट हुए है। इसी से समस्त सृश्टि का सृजन हुआ है।

विद्युत तत्त्व के दृश्टा भृग्वाङि.गरा ऋशि ने शक्ति के जिस रूप को उपस्थित किया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। उक्त ऋशि ने चार मन्त्रों में हो शक्तितत्त्व के सार को संकलित कर दिया है।

प्रायः विद्वानों के मतानुसार वेदों में पुरूश देवताओं का वर्णन बहुतायत से हुआ है। ऋग्वेद में इन्द्र, अग्नि, वरूण, सोम, सविता, सूर्य, मित्र, मरूत, विश्णु, पर्जन्य और उशा ये ग्यारह देवता प्रमुख है। ''माहाभाग्यात् देवतायाः एक एव आत्मा बहुधा स्तूयते। इस नैरूक्त–वचन के अनुसार एक ही परमात्मा की स्तुति विविध देवताओं के रूप में की गई है।

ऋग्वेद में प्रायः चालीस देवियों के नामों का उल्लेख प्राप्त होता है। यथा उशा, रात्रि, सिनिवाली, राका, गंगा, पृथिवी, अदिति, पृथिवी, दिति, स्वस्ति, रेवती, पुरन्धी, अनुमति, आप सरस्वती, सिन्धु, अरण्यानी, इन्द्राणी, वरूणानी, रूद्राणी, आग्नेयी, षरण्यु, सूर्यी, षची, रोदसी, सीता, दक्षिणा, श्रद्धा, इला, मही, भारती, गौरी, स्वाहा, उर्वषी, अलक्ष्मी, कृत्वा, निर्ऋति इत्यादि। इसके अतिरिक्त श्री, वाक्, विद्युत आदि शक्तियों का भी उल्लेख प्राप्त होता है।

हिन्दू धर्म सगुण परमात्मा की माता और पिता के रूप में उपासना करता आया है। ऋग्वेद में ईष्वर का पितृरूप प्रजापति कहलाया, जिसका तात्पर्य है जीवों के प्रभु और पिता। इन्हीं प्रजापति को

ऋग्वेद के एक स्थान पर ''द्यौः पिता'' कहा गया है।

अदिति सूक्त में शक्ति के मातृभाव का विवेचन किया गया है। इसे आदित्यगणो की जननी देवताओं की माता तथा पापापहारिणी कहा गया है। यह अपने भक्तों को पापरहित धन प्रदान करती है एवं षत्रुओं के

बन्धन मुक्त करवाती है, भक्तगण अपनी रक्षा के लिए इसी देवी से प्रार्थना करते है। इनका कोई भी षत्रु नही है।

उशा – अदिति के बाद उशा देवी की वेदों में स्तुति लगभग बीस सूक्तों मे की गई है। इन्हें कुमारी देवी के रूप में द्यौः की पुत्री कहा गया है। उशा देवी भौतिक विधि अन्न–उत्पादिनी, षत्रु विनाषिनी, रोग निवारिणी और अदिति की प्रतिद्वन्दी रूप में वर्णित हुई है।

पुराणों मे षाक्ति का स्वरूप

अस्त्र–षस्त्र धारिणी श्री भगवती के जिस युद्ध का वर्णन वेद मे समासरूप से किया गया है, उसी को महर्शि वषिश्ठ के प्रपौत्र तथा शक्तितनय महर्शि पराषर के सुपुत्र कृश्णद्वैपायन महर्शि वेदव्यास ने अपने ज्ञान नेत्रों से साक्षात्कार करके पुराणों में व्यास रूप से दर्षाया है।

दुर्गा को लेकर संस्कृत–वाड्.मय में विषाल साहित्य उपलग्ध होता है, जो ''षक्तितन्त्र के नाम से विख्यात है। कतिपय महापुराणों मे दुगा का पूजा विधान उपलब्ध होता है। सर्वाधिक रूप में तो दुर्गा का वर्णन देवीभागवत, देवीपुराण तथा कालिकापुराणादि उपपुराणों मे ही मिलता है। मार्कण्डेय पुराण का देवीमाहात्म्य 'सप्तषती', 'दुर्गासप्तषती' एवं चण्डी चरित्र के नाम से प्रख्यात है। दुर्गासप्तषती में दुर्गा चरित्रत्रय का विषद एवम् विस्तृत प्रतिपादन किया गया है। दुर्गासप्तषती के विशय में डॉ. वासुदेव अग्रवाल का कथन है कि –

भक्तदर्शन में शक्ति का स्वरूप

भक्तदर्शन के मूल में जो शक्ति है। वस्तुतः यह परमेष्वर की अचिन्त्यमहिमा है। इसी चित्ति शक्ति को पतजली ऋशि ने 'अपरिणामिनी' तथा संक्षेपषरीरकार सर्वज्ञात्ममुनि ने 'अमला' कहा है। चिद्रूपाषक्ति का विषेश समालोचन आगम षास्त्र मे ही प्राप्त होता है। प्रत्यभिज्ञा ह्रदयम् में इसे ''चितिः स्वतन्त्रा विष्वसिद्धि हेतुः कहा गया है। षंकराचार्य जी ने अव्यक्तनामा, परमा, ईषा, अनादि, अविद्या, परा, प्रकृति, माया तथा महाद्भुता अनिर्वचनीया कहा है।

यह शक्ति षिव से अभिन्न होने पर भी विष्वसृश्टि की मूलभूत है। इसका परिणाम नही होता है परन्तु विस्तार तथा संकोच होता है। शक्ति ही संसार का रूप लेकर प्रकट होती है। भोक्ता तथा भोग्य दोनों ही षाक्तिरूप है। इनकी नियामिका भी शक्ति ही है। वस्तुतः अभिनय भी शक्ति ही करती है और अपने अभिनय की प्रेक्षिका भी शक्ति ही है। स्वरूपस्थिति में जीव भी षक्त्यात्मक होने के कारण दृश्टामात्र है।

तटस्थ जीव स्वरूपतः दृश्टा, मायोजाल से बद्ध जीव भोक्ता तथा किंचित् जाग्रत जीव अभिनेता है। पूणजागरण के अन्त में जीव ही षिव रूप में प्रकट हो जाता है। उस समय पूर्णषक्ति उसी की निजषक्ति है तथा सर्वान्त में कुलाकुल के अतीत जो कुछ है वह एकमात्र अखण्डसत्ता है।

षाक्तमत में पचकृत्य – अन्यान्य दृश्टियों मे परमेष्वर के तीन कृत्यों का उल्लेख दिखाई देता है। इसलिए उसमें अधिकारी पुरूश तीन माने जाते है, जो ब्रह्मा, विश्णु और रूद्र है। षाक्तमतानुसार कृत्य पांच है, तीन नहीं। तिरोधान और अनुग्रह ये दो कृत्य अधिक माने जाते है। आत्मसंकोच ही तिरोधान के नाम से व्यवहृत किया जाता है। आत्मसंकोच से रहित शक्ति का उद्भव सम्भव नहीं है, क्योकि संकोचहीन आत्मा का देहसम्बन्ध नहीं होता। जब तक अनुग्रह की उत्पत्ति न हो तब तक संहार को संहार नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उसे अभिनव सृश्टि का बीज रह जाता है। संहार काल का खेल है। काल के बाहर जाने के लिए परम अनुग्रह आवष्यक है।

अभेद में जो भेद का आभास है, उसी का नाम तिरोधान है। अखण्ड प्रकाष के साथ जो एकात्मक रूप में प्रकाषन है, वही अनुग्रह है। इसी कारण भक्तदर्शन की दृश्टि से अधिकारी पुरूशों की संख्या तीन न मानकर पांच मानी गई है। प्रचलित तीन अधिकारियों से अतिरिक्त ईष्वर आर सदाषिव दो अधिकारी और माने गए है।

विष्व की समस्त शक्तियां चित्, आनन्द, इच्छा, ज्ञान और क्रिया इन पांच षाक्तियों के अन्तर्गत है। स्वतन्त्र एवं स्वतः प्रकाष आत्मा सत् स्वरूप, देष तथा काल से अपरिच्छिन्न है। उसके प्रकाष का प्रत्यक्ष ही विच्छक्ति है। चित्ति की स्वतन्त्रता आनन्दषक्ति है। चमत्कार या क्रीड़ा इच्छाषक्ति है। आमर्शरूपता ज्ञान षाक्ति है तथा सर्वाकार–योगिता क्रियाषक्ति है। ये पांच प्रसिद्ध शक्तियां है। आत्मा स्वंय षिवरूप है एवं उनके पंचमुख की कल्पना ही पांच शक्तियां की स्वीकृति है।

त्रिषक्ति स्वरूप – सच्चिदानन्द परमेष्वर के समस्त स्वरूप मं शक्ति का प्रत्यक्ष होता है। उसी शक्ति से नाद एवं नाद से बिन्दु उत्पन्न होंता है। वाक् ही नाद है।

इसका प्रतीक वर्णमाला है। यह नाद षब्द स्वरूप एवं बिन्दु रूप साकार सृश्टि है। इस दृष्यमान जगत् में नाद ही नाम एवं बिन्दु ही रूप है। चेंतना के विस्तार काल में जो स्पन्दन होता है, वही शक्ति है। शक्ति बीज तथा नाद एवं बिन्दु को मिलाने से त्रिकोण बनता है। त्रिकोण के मध्य का स्पन्दन ही सृश्टि का रूप लेकर प्रकट होता है। इस त्रिकोण की तीन रेखाएं – पष्यन्ती, मध्यमा एवं वैखरी तीन प्रकार के षब्द सृश्टि स्थिति एवं संहार, तीन प्रकार के व्यापार वामा, ज्येश्ठा और रौद्री ये तीन प्रकार की क्रिया–शक्तियां, ब्रह्मा, विश्णु और रूद्र ये तीन प्रकार के षिवांष तथा इच्छा, ज्ञान, क्रिया ये तीन प्रकार की शक्तियां है।

उक्त तत्त्व त्रय ही त्रिलोक एवं त्रिमूर्ति है। इसी को त्रिपुरा एवं त्रिकोण रूपी मूलाधार निवासिनी अमृतमयी कुण्डलिनी कहते है। भगवान षिव का त्रिषुल षैवों का त्रिपुण्ड, वैश्णवों का उर्ध्वपुण्ड्र की तीन रेखाएं भी उसी तत्त्वत्रय के प्रतीक है।

पराषक्ति के विभिन्न रूप – भगवती पराम्बा सच्चिदानन्द स्वरूपिणी है। अपनी सर्वव्यापकता के कारण सर्वत्र विद्यामान रहने वाली है। सौन्दर्यलहरी में शक्ति को ही मन, आकाष, अग्नि, वायु, जल और भूमि रूप में विराट् देहधारिणी कहा गया है। इसके अनेक नाम एक दूसरे के पर्यायवाची है। इसे ही चित्तिषक्ति, विच्छक्ति, वेतनषक्ति, देवीषक्ति, ब्रह्म और आत्मा इत्यादि नामों से व्यवहृत किया जाता है। यही समस्त, स्थावर एवं जंगम सृश्टि का उत्पन्न करती है। भुवनेष्वरी, सावित्री, सरस्वती, ब्रह्मानन्दकला, चिदानन्दलतिका, त्रिपुरसुन्दरी आदि इसके सहस्त्र नाम है। यथा महावृक्ष सूक्ष्मरूप से स्वल्पकाय बीज में विद्यामान रहता है। पुनः उत्पन्न होकर यह महावृक्ष के रूप में परिणत हो जाता है। उसी प्रकार सम्पूर्ण चराचरात्मक जगत् भी चिदिरूपिणी पराषक्ति से उत्पन्न होता है।

षाक्ताद्वैतदृश्टि – भारतीय विचारकों ने बहुत स्थलों पर जागतिक खण्ड सत्ताओं के पीछे एक अखण्डमहासत्ता की परिकल्पना की है। कल्पना–कर्त्ताओं की विचित्रता से इन कल्पनाओं में भी आष्चर्य दृश्टिगोचर होता हैं। फिर भी यह सत्ता वास्तव में अद्वैत, परमार्थ और कल्पना से सर्वथा अस्पृश्ट है। इसका साक्षात्कार ही मानव जीवन का चरम एवं एकमात्र लक्ष्य है। उपदेश्टा गुरूजन अपने–अपने षिश्यों को धारणा शक्ति के अनुसार अनेक प्रकार से इसी एक महासत्ता का उपदेष देते है। इसी विचारधारा को पुश्पदन्ताचार्य ने अपनी रचना में प्रवाहित किया है।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्डमय अवलोकित (दृश्टिगत) प्रप०च ब्रह्म शक्ति का ही विलास है। यह शक्ति ही सृश्टि, स्थिति और संहार करती है। यही अविद्या का रूप धारण करके जीव को बन्धन जाल में फंसाती है और विद्या बनकर ब्रह्म साक्षात्कार करवाकर मुक्त कर देती है। अतः यह एक होती हुई भी अनेक रूपों में लीला करके पुनः एक में ही पर्यवसित हो जाती है।

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा

यह दिव्यनाद स्वयं भगवती कामेष्वरी ने उद्घोशित किया है।

षाक्त दृश्टिकोण –शक्ति को अच्छी प्रकार से जानने के लिए साधना परमावष्यक है। षाक्त साधक भाव विभोर होकर उस परमसत्ता को माँ षब्द से उच्चारित करते हैं।

1. वह्वृचोपनिशद् – 3–4 उड्यार 1925
2. रामपूर्वतापिन्यां द्वितीयोपनिशद् :–

   कारणत्वेन चिच्छक्त्या रजः सत्त्वतमोगुणैः

   यथेव वटबीजस्थः प्राकृतष्च महान् द्रूमः

3. त्रयी सांख्यं योगः पषुपतिमतं वैश्णवमिति

   प्रभिन्न प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।

   रूचीनां वैचित्रयादृजुकुटिलनानां पथजुशां

   नृणामेको मम्यस्त्वमसि पयसार्णव इव।

   – षिवमहिम्न स्तोत्रम्

4. दुर्गासप्तषती, 10.5

इनके अनुसार शक्ति लीलामयी है। षिव और शक्ति का दिव्य मिथुनभाव ही ब्रह्म का अपने स्पन्दन के साथ क्रीड़ा है। वाणी से अर्थ की सृश्टि ही कला है। वस्तुतः वाक् और अर्थ नित्यरूप से संयुक्त है। उन्हें ही षिव और शक्ति के नाम से जाना जाता है। यही बीज रूप है। यही बीज, नाद, बिन्दु संयोग से त्रिकोण, योनि अथवा काम कला कहा जाता है। अतः काम कला का अर्थ है षिव शक्ति संयोग। इस संयोग के संकोच और प्रसार रूपी दो बिन्दु ही कामेष्वर और कामेष्वरी रूप नित्य मिथुन है। यह बिन्दु अकार–वाचक प्रकाष और हकार वाचक विमर्ष मिथुन का समरसाकार है।

लौकिक संस्कृत–साहित्य में शक्ति

सातवीं षताब्दी के महाकाव्य हर्शचरित में कविवर बाणभट्ट ने इस तथ्य को स्तश्ट किया है कि षाक्तमत हर्श के बुद्ध धर्म स्वीकार करने से पहले दूर–दूर तक फैला हुआ था। उस समय नर–बलि का भी सन्दर्भ मिलता है। अवन्ति सुन्दरी नामक ग्रन्थ में कवि दण्डी ने बताया है कि विन्ध्याचल की गुफाओं में चण्डिका देवी की पूजा होती थी। जनजातियां नर–पषु बलि देकर देवी को प्रसन्न करती थी। दषकुमारचरितम् में चण्डिका देवी के मन्दिर में षाबर जाति के उपासक एक बालक की बलि देते हुए वर्णित हुए है।

अपने प्रौढ़ काव्य वासवदत्ता में सुबन्धु ने यह निर्दिश्ट किया है कि कात्यायनी देवी ने महिशासुर का मर्दन तथा षुम्भ और निषुम्भ का संहार किया था। कुसुमपुर नगर में चण्डिका देवी के स्थाई निवास का भी संकेत है।

भवभूति के मालती–माधव नाटक को नायक माधव षमषान में सिद्धि पाने के लिए पिषाचों को मानव मांस अर्पित करता हुआ चित्रित किया गया है। वहीं पर

1. इसे ही नाद बिन्दु त्रिकोण, त्रिषूल, त्रितत्त्व, त्रिषक्ति योनि या कामकला कहा जाता है।

2. स्फुट षिवषक्ति समागम बीजाड्कुररूपिणी पराषक्तिः।

3. बाणभट्ट, हर्शचरितम् पृ. – 21, 5 उच्छ्वास

4. अवन्तिसुन्दरी, दण्डी पृ. – 39

5. टषकुमारचरितम्, दण्डी, पृ.– 15

6. सुबन्धु वासवदत्ता, पृ.– 133

चामुण्डा देवी के देवालय में अधोरघण्ट नामक तान्त्रिक और उसकी षिश्या कपालकुण्डला द्वारा बलि–पषु बनायी गई अपनी प्रियतमा मालती की रक्षा करता है।

प्राकृत नाटक कर्पूरमजरी में कवि राजषेखर ने कौल चमत्कारी गौरवानन्द का वर्णन किया है। नवम् षताब्दी के इस नाटक में देवी के विभिन्न उत्सवों तथा गौरी–डोला–यात्रा का भी वर्णन है। इस प्रकार विभिन्न काव्यों के परिषीलन से शक्ति के सात्विक, राजसिक तथा तामसिक तीनों प्रकार की उपासनाओं के संकेत प्राप्त होते है।

कवि कुलगुरू कालिदास जी ने कुमार सम्भव नामक महाकाव्य में षिव उमा विवाह तथा स्कन्दकार्तिकेय के जन्म का श्रंगार रस परिपूर्ण भाव व्यजना से विवेचन किया है। षिव के विवाहोत्सव में ब्राह्मी, माहेष्वरी, कुमारी, वैश्णवी, वाराही, इन्द्राणी और चामुण्डा आदि सप्तमातृकाओं के साथ भयंकरी मुण्डमाला धारिणी कालिका देवी भी उपस्थित हुई थी।

द्वितीय अमरकृति रघुवंष के मंगलाचरण ष्लोक में जगत् के माता–पिता के रूप में पार्वती और परमेष्वर का अद्वैत वर्णन अपने आप में अनूठा है।

ज्गतः पितरौ बन्दे पार्वतीपरमेष्वरौ।

रघुवंष मंगलाचरण

शक्ति की विविध नामोपासना

डॉ. पुश्पेन्द्र षर्मा ने धरती के विभिन्न देषों में पूजित होने वाली इन मात्षाक्तियों के विभिन्न नामों का उद्घाटन किया है। यथा भारत में शक्ति को प्रकृति, आधारषक्ति, पृथिवी, ईषा एवं काली, गौमाता, इडा और त्रिपुरसुन्दरी आदि नामों से जाना जाता है। बेबीलोन की माईलिटा, बुद्धधर्मावलम्बियों की तारा, मैक्सिको की ईष, हेलेनिक की ओसेवा, अफीका की सैलम्बो, रोम की जुनो, इजिप्ट की बास्ट, आइसीरिया की स्कौथवेडथ आदि देवियां भी पूर्णतः सामर्थ्यवती एवं सर्वस्वरूपा रूप में मान्या एवं पूज्य है।

दुर्गासप्तषती में विभिन्न नामों से शक्ति की अधिश्ठात्री देवियों की स्तुति की गई है। जिनका वर्णन इस प्रकार है।

कवच में वर्णित अंगाधिश्ठात्री देवियां

कवच की अधिश्ठातृ देवता – त्रिगुणात्मिका दुर्गा के नवमूर्तियों का नामोच्चारण पूर्वक प्रथम ध्यान की प्रक्रिया अपनाई गई है। हिमालय के पुत्रीत्व को स्वीकार करने के कारण जगदम्बा का नाम षैलपुत्री हुआ। तपष्चर्या के द्वारा ब्रह्मरूपी सच्चिदानन्दघन परमात्मा की भावना संचरण के कारण ब्रह्मचारिणी नाम से विख्यात हुई। चन्द्रवत् निर्मल घण्टा को हाथ में धारण करने के कारण आह्लादकारिणी देवी चन्द्रघण्टा इस नाम से प्रसिद्ध हुई। कुत्सित उश्मा स्वरूप सन्ताप त्रय से युक्त संसार जिसके उदराण्ड में विलासित हो, उसे कुश्माण्डा नाम से जाना जाता है। तारकासुर के वध के निमित्त स्कन्द को जन्म देने वाली स्कन्दमाता देवताओं के कार्यो को सिद्ध करने के लिए कात्यायन मुनि के आश्रम में प्रकट हुई। इसी कारण इसको कात्यायनी कहा गया। महामृत्यु स्वरूप काल की रात्रि अर्थात् काल की विनाषिका होने के कारण कालरात्रि कहलाई। इसी महामानिनी शक्ति ने षिव द्वारा काली कहकर उपहास किए जाने पर तपस्या के द्वारा गौर षरीर का सम्पादन किया तथा इसका नाम महागौरी पड़ा। भगवती पराम्बा सिद्धि स्वरूप मोक्षादि फलों को प्रदान करने के कारण सिद्धिदात्री नाम से प्रसिद्ध हुई।

नवमूर्त्यात्मिका दुर्गा को सात सतियों के रूप में स्मरण करने के लिए चामुण्डा, वाराही, ऐन्द्री, वैश्णवी, माहेष्वरीं, कौमारी और ब्राह्मी नाम से अभिहित करके उसके आसन, वाहन, स्वभाव और आभूशणादि का वर्णन किया गया है। सप्तमातृका स्वरूपा यह भगवती दैत्यों के नाष एवं भक्तों की रक्षा के लिए और देवताओं के हित के लिए आयुधों को धारण करती है–

दैत्यानां देहनाषाय भक्तानामभवाय च।

धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै।।

यह नवदुर्गा, सप्तमात्रिका स्वरूपा भगवती दष रूपों को धारण करके क्रमषः पूर्वादि दिषाओं में कवच पाठक की रक्षा करती है। पूर्व में इन्द्र की शक्ति ऐन्द्री अग्निकोण में अग्निषक्ति, दक्षिण में महिशासना मुत्युस्वरूपा यग शक्ति वाराही, नैऋत्य कोण में खड्ग धारण करने वाली निर्ऋति शक्ति, पष्चिम में वरूण की शक्ति वारूणो, वायुकोण में मृगवाहिनी वायुषक्ति, उत्तर दिषा में कुबेर की शक्ति कौमारी तथा ऊर्ध्व लोक में ब्रह्मा की शक्ति ब्रह्माणी एवं अधोलोक में अनन्त रूप विश्णु की शक्ति वैश्णवी रक्षा करती है। ये दषरूप दष दिषाओं के अनुसार दष दिक्पाल की शक्तियों से सम्बन्ध है। चामुण्डा भगवती दषों दिषाओं में अपने उपासक की रक्षा करती है।

तदनन्तर जया, विजया, अजिता और अपराजिता शक्तियों को चारों ओर से सन्निधान पूर्वक रक्षा के लिए आवाहित किया गया है।

मेरे सामने जया देवी विराजमान हों अर्थात् जहां भी में जाऊं, वहां मेरी जय हो तथा मेरे पीछे विजया देवी विजय प्रदान करें। मेरे समक्ष मेरा सम्मान हो तथा पीछे मेरी प्रषंसा हो।

दिव्य तेज समन्विता उद्योतिनी देवी षिखा की और ब्रह्मज्ञान प्रकाषिका उमा मूर्धा की रक्षा करे। ये सम्पूर्ण नामावलि सहैतुक है। तीनों कालों में विराजमान रहने वाली त्रिनेत्रा देवी ध्रुवों के मध्य भाग की रक्षा करें। श्रोत्रद्वार से ही मोह, लोभ, स्वरूप मधु–कैटभ का जन्म होता है। अतः इनसे साधक की रक्षा करने के लिए

देवी कवच – सप्तषती सर्वस्व के आधार पर

भगवती द्वारवासिनी रूप धारण करके दोनों श्रोत्रों की रक्षा करें।

नसिका की सुगन्धा देवी, जिह्वा की सरस्वती देवी, उदर की षूलधारिणी देवी, गुह्म की गुह्मेष्वरी तथा मेढ्रं की कामिका पद्मकोषों की पदमावती, पथ में सुपथा देवी तथा राजद्वार में महालक्ष्मी के द्वारा रक्षा का विधान गुणानुरूप है। अनुक्त स्थानों की रक्षा के लिए जयन्ती देवी की सर्वविजयारूप में प्रार्थना की गई है।

कवच के द्वारा सुरक्षित मनुश्य जहां–जहां जाता है वहां–वहां उसे धन लाभ और विजय की प्राप्ति होती है। वह मनुश्य निर्भय और अपराजित होकर तीनों लोकों में पूज्य हाता है। यह कवच देवताओं के लिए भी अतिदुर्लभ है यथा–

''इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम्।''

क्वच को धारण करने वाला मनुश्य सौ से भी अधिक वर्शों तक जीवित रहता है। उसकी चेचक और कोढ़ इत्यादि सम्पूर्ण व्याधियां नश्ट हो जाती है। मारण–मोहन आदि प्रयाग तथा यन्त्र–मन्त्र–तन्त्रादि का दुश्प्रभाव नश्ट हो जाते है। भयानक भूत–प्रेतादि कवचधारी व्यक्ति को देखकर ही भाग जाते है। इस कवच का पाठ करके सप्तषती का पाठ करने वाले व्यक्ति की सन्तान परम्परा बनी रहती है। मृत्यु होने पर नित्य परमपद की प्राप्ति होती है तथा सुन्दर दिव्य रूप धारण करके षिव के साथ आनन्द का भागी होता है।–

लभते परमं रूपं षिवेन सह मोदते।

कवच की महिमा अन्यत्र भी गाई गई है। स्तोत्र के नाम, ध्यान और मन्त्रादिकों से वाक्य हजारों गुणा अधिक महत्वपूर्ण है। कवच का अर्थ है वाक्य स्वरूप मन्त्रमय देह। इस मन्त्रमय दे हके ऋशि, द्रश्टा, वाक्यमय चतुर्मुख द्वारा चारों वेदों का प्रवक्ता ब्रह्मा है।

इन्द्रिय लालसा का दमन करने वाली चामुण्डा शक्ति इस कवच की देवता है। साधन ज्ञान के आच्छादन द्वारा अज्ञानरूपी मृत्यु से आच्छादित करने वाला अनुश्टुम छन्द है। अर्थात् इस स्तोत्र में साधक ब्रह्मा, साधन मन्त्र–देवी कवच, साधन प्रणाली अनुश्टुम् छनद और आराध्य देवता चामुण्डा महाकाली है। देवी का यह कवच अमोघ फल प्रदान करने वाला है। इसमें प्रायः सौ देवियों का वर्णन है। ये सम्पूर्ण शक्तियां तत्तद् अंगों में जाग्रतावस्था में विद्यमान रहती है। षुद्ध मन से इन देवियों का नामोच्चारण मात्र अनन्तषक्ति प्रदान करता है। इससे साधक सर्वत्र सुरक्षित रहता है।

अग्निना दह्ममानस्तु षत्रुमध्ये गतो रणे।

विशमे दुर्गमे चैव भयार्ताः षरणं गताः।।

न तेशां जायते किंचिदषुभं रणसंकटे।

नापदं तस्य पष्यामि षोकदुःखभयं न हि।।

जो भी व्यक्ति कवच के द्वारा भगवती क विभिन्न स्वरूपों एवं नामों की उपासना करता है। भगवती उसकी अवष्यमेव रक्षा करती है

ये त्वां स्मरन्ति देवेषि रक्षसे तान्न संषयः।

भक्तिगम्ये माहमाये नमस्ते जगदम्बिके।

संसारसागरोत्तारपोतीभूतपदाम्बुजे।।

भगवती भवभयहारिणी महामाया जगदम्बा भक्ति से ही जानने योग्य ह। भक्त अपने चित्त को समाहित करके इसका दर्षन प्राप्त कर सकता है। यह जगन्माया कल्याणमय विग्रह धारण करने वाली एवं प्राकृतिक गुणों से रहित है। विष्व के सम्पूर्ण ग्रन्थ इसके प्रभाव का वर्णन करने में असमर्थ है। यह स्वयं सर्वस्वरूपा है तथा समस्त प्रभाव इसी के रूप है। अतः यह स्वयं भी अपने परम–प्रभाव को नहीं जानती–

कथंकारं वाच्यः सकलनिगमागोचरगुण–

प्रभावः स्वं यस्मात् स्वयंमति न जानासि परमम्।।

दुर्गा के नवरूप

श्रीमद् देवीभागवत में दुर्गा देवी को शक्ति की अधिश्ठात्री देवता माना गया है। पंच प्रकृतियों में इसका अपना विषिश्ट स्थान है। यहां पर भगवती दुर्गा को विश्णुमाया, सनातनी, नारायणी, ईषाना, मूल प्रकृति, ईष्वरी, त्रिगुणत्मिका स्थिति, बुद्धि, निद्रा, तन्द्रा, क्षमा, मति, षान्ति, लज्जा, तुश्टि, पुश्टि, भ्रान्ति, क्रान्ति आदि नामों से सम्बोधित किया गया है। भक्तों की भक्ति, कामियों की षाक्ति, मुमुक्षुओं की मुक्ति आदि इसका रूप है। इसके द्वारा ही आत्मा शक्तिमान बनता है। यही सर्वरूप होकर विराज रही है।

यया च शक्तिमानात्मा यया च शक्तिमज्जगत्।

यया विना जगत सर्वं जीवनन्मृतमिव स्थितम्।।

या च संसार वृक्षस्य बीजरूपा सनातनी।

स्थितिरूपा बुद्धिरूपा फलरूपा च नारद।।

निषुम्भ वध के प्रसब में देवी भागवत के पंचम स्कन्ध के अठाइसवें अध्याय मे तथा दुर्गासप्तषती के आठवें अध्याय में कात्यायनी दुर्गा के नव रूपों का परिचय प्राप्त होता है। इसके नाम हैं– ब्रह्माणी, वैश्णवी, षांकरी, इन्द्राणी, वाराही, नारसिंही, षिवदूती तथा स्वयं चण्डिका।

नवकन्या भेद – देवी भागवत में कन्या पूजन प्रसब में दो से दस वर्श की आयु वाली, कन्याओं का नवरूप वर्णित है। इन्हें क्रमषः कुमारिका, त्रिमुर्ति, कल्याणी, रोहिणी, कालिका, चण्डिका, षांभवी, दुर्गा, और सुभद्रा कहा गया है। विभिन्न कामनाओं की पूर्ति के लिए भगवती के उक्त नवरूपों की आराधना का विधान है।

पार्वती के नवरूप – दुर्गासप्तषती के दुर्गा कवच में भगवती दुर्गा के नवरूपों का स्पश्ट रूप से वर्णन प्रस्तुत किया गया है। षैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कुश्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, महागौरी, सिद्धिदात्री– इन्हें नवदुर्गा प्रकीर्तिता कहा गया है।

देवीभागवत महापुराण में भगवती देवी हिमालय को उपदेष देते हुए कहती है कि मेरी पूजा दो प्रकार की है, वाह्य और आभ्यन्तर। वाह्य पूजा के भी दो भाग है, वैदिकी और तांत्रिकी। मूर्ति – भेद से वैदिकी पूजा भी दो प्रकार से सम्पन्न होती है। वेद के मन्त्रों के ज्ञाता वेद के मन्त्रों का उच्चारण करके जो पूजा करते है वह वैदिकी तथा तन्त्रोक्त मन्त्रों से जो पूजा सम्पन्न होती है उसे तांत्रिकी पूजा कहते है। इस प्रकार पूजा–रहस्य को न समझकर जो अज्ञानी मानव उलटे ही ढ़ग से पूजन मे संलग्न होता है, वह सर्वथा पतनोन्मुख है। वैदिक पूजा इस प्रकार है। जो मेरा विराट–स्वरूप है जिसमें अनन्त मस्तक, नेत्र और चरण है जो सम्पूर्ण शक्तियों से सम्पन्न है उसी रूप का निरन्तर पूजन, नमन, ध्यान और स्मरण करना चाहिए।

उपसंहार

चित्त को षान्त करके सावधान होकर तथा दम्भ एवं अहंकार से षून्य होकर उसकी (देवी की) षरण में जाओ। यज्ञषील बनकर पूजा में पूरी तत्परता रखना। जिससे चित्त के द्वारा वही रूप दिखाई देता रहे। जप और ध्यान की श्रृंखला कभी टूटे नहीं। अनन्य एवं प्रेमपूर्ण भक्ति से मेरे उपासक बनकर यज्ञों के द्वारा मेरा पूजन, तप एवं दान के द्वारा मुझे ही सन्तुश्ट करने का प्रयत्न करो। ऐसा करने से मेरी कृपा तुम्हें संसार–बन्धन से अवष्य मुक्त कर देगी। मैं ध्यान योग, कर्मयोग, भक्तियोग अथवा ज्ञानयोग इनमें से किसी के द्वारा भी प्राप्त हो सकती हूं, न कि केवल कर्मयोग से ही। कर्म निरर्थक नहीं है। क्योंकि सत्कर्म के प्रभाव से पाप का उच्छेद होकर धार्मिक भावना जाग जाती है। एवं जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब–तब मेरे अवतार हुआ करते है। उनसे लोगों को सद्धर्भ की प्रेरणा तथा अधर्म से भयभीत करने का उद्देष्य सिद्ध होता है।

सन्दर्भ सूची

1. कालिकापुराणम्, बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा ऑफिस, वाराणसी, वि.सं. 2009
2. काव्यप्रकाष, मम्मटाचार्य, दुर्गा ऑफसेट प्रेस, मेरठ, 1992
3. कुमारसम्भवम्, महाकवि कालिदास, चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, पं. संस्करण 1986
4. षाक्त उपनिशद्, ए.एम.षास्त्री, अड्यार, 1950
5. षाक्त प्रमोद, खेमराज श्री कृश्णदास प्रकाषन, बम्बई, 1990 ई.